IMPACT FACTOR 7.50 (SJIAI)
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 4, Issue 2, April-june, 2026
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.20112429
ISSN : 3048-6971

"वर्तमान संदर्भ में घरानेदार संगीत शिक्षा एवं शिक्षण संस्थाएं"

डॉ चंद्रकला स्वामी
सहायक आचार्य, संगीत विभाग
FASS ,IASE मानित विश्वविद्यालय, सरदारशहर
Email- swami.chandra123@gmail.com

सारांश

वर्तमान काल में भारतीय संगीत की पहुंचे विश्व के हर कोने में है। दुनिया के हर कोने के लोगों में भारतीय संगीत को सीखने की ललक दिखाई पड़ती है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और यह सार्वभौमिक है। परंपरागत घराना पद्धति को वर्तमान स्वरूप तक ले लाने में संगीत के महान संगीतज्ञों ने कठोर तप किए हैं। भारतीय संगीत परंपरा में पहली बार व्यावहारिक संगीत को लेखबद्ध करने का प्रयास प्रारंभ हुआ। फलस्वरुप संगीत के व्यावहारिक पक्ष को मजबूती प्रदान करने के लिए रागों और बंदिशों को लिपिबद्ध किया गया। सही दिशा सही लक्ष्य तक पहुंचा देती है वर्तमान संदर्भ में संस्थागत संगीत शिक्षा तथा शिक्षण संस्थाएं इसी का परिणाम है।

बीजक शब्द- भारतीय संगीत, घराना, परंपरा, शिक्षा, शिक्षण

भूमिका

भारतीय परंपरा में संगीत सर्वाधिक प्राचीन विधा है। यहां का संगीत इतना प्राचीन है, जितना मनुष्य का जीवन। संगीत मानवीय मनोभावों की अभिव्यक्ति का एक ऐसा सर्वोत्कष्ट माध्यम है, जिसके द्वारा शुष्कतम जीवन में भी सरसता का संचार हो जाता है। प्रस्तर, गुफावासी मानव भी अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए गाता, बजना एवं नृत्य करता था। जैसे-जैसे मानवीय सभ्यता का विकास हुआ संगीत के विविध आयाम प्रकट होते चले गए। भारतीय संगीत का सुसंस्कृत रूप वैदिक युग से लेकर वर्तमान तक विविध परिवर्तनों के माध्यम से ही पल्लवित होता आया है भारतवर्ष का संगीत पूर्णतः आध्यात्म प्रधान है, जिसे प्रारंभ से ही नाद ब्रहम अर्थात् परमात्मा के स्वरूप में देखा गया है। इसी आध्यात्मिक परंपरा ने भारत को संपूर्ण विश्व में सुसंस्कृत एवं सुसभ्य संस्कृति का गौरव प्रदान किया है।

अनुसंधान का उद्देश्य

इस शोध अध्ययन का उद्देश्य भारतीय परंपरागत संगीत शिक्षा और आधुनिक संगीत शिक्षण की पद्धति में सामंजस्य स्थापित करना है, ताकि वर्तमान से भविष्य में संगीत की गुरुकुल पद्धति और आधुनिक शिक्षण पद्धति को अपने मूल स्वरूप में स्थानांतरित किया जा सके।साथ ही अच्छे और पारंगत कलाकार, शिक्षक एवं विद्यार्थी हमें प्राप्त हो सके।

अनुसंधानपद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है जिसमें संगीत की पारंपरिक शिक्षा एवं आधुनिक शिक्षा के संबंध पर प्राचीन ग्रंथो दार्शनिक ग्रन्थो और संगीत परंपराओं का गहन अध्ययन किया गया है।

वैदिक काल से आधुनिक काल तक संगीत का स्वरूप

वैदिक युग में ऋषि मुनि ईश्वर की आराधना मन्त्रों के उच्चारण से किया करते थे, जो की पूर्णतः संगीत युक्त होता था। वैदिक युग में रचित सामवेद पूर्णतः संगीत पर आधारित है।साम का अर्थ गीति अर्थात गान बताया गया है। वैदिक कालीन संगीत की यह विधा गुरुकुलों के रूप में पुष्पित पल्लवित हुई थी। इस परंपरा में शिष्य पूर्णकालिक समय गुरुकुलों में रहकर संगीत की शिक्षा प्राप्त करते थे।समय के परिवर्तन के साथ-साथ इस विधा के स्वरूप में भी परिवर्तन होता गया। मध्यकाल में राज्याश्रित रियासत कालीन व्यवस्था के अंतर्गत यह विधा राजमहल में ही पल्लवित होने लगी। संगीतज्ञ राजमहल में रहकर राज परिवार के सदस्यों को संगीत की शिक्षा प्रदान किया करते थे, साथ ही राज दरबार में संगीत का प्रदर्शन कर मनोरंजन भी किया करते थे। उस समय संगीतज्ञों को विशेष सम्मान की दृष्टि

से देखा जाता था। संगीत को आध्यात्मिक रूप के साथ मनोरंजन के एक साधन के रूप में भी देखा जाने लगा। कलाकारों को राजकुल की शोभा के बदले अच्छा पारिश्रमिक, पारितोषिक एवं मान सम्मान प्रदान किया जाता था। विशेष अवसरों पर संगीत की विभिन्न प्रतियोगिताओं का उच्च स्तर पर आयोजन किया जाता था एवं विजेता को बहुत सम्मान प्राप्त होता था। बदलते सामाजिक एवं राजनैतिक परिवेश में संगीतज्ञ अपनी प्रतिभा को अपने तक ही अथवा अपने आसपास सीमित रखने लगे। अपना सांगीतिक ज्ञान दूसरे लोगों तक न पहुंचे इसके लिए पारिवारिक व्यक्तियों को ही इस विधा में प्रवीण करने लगे। संगीत में वंशवाद प्रणाली ने जन्म लिया तथा उनकी संकीर्ण मनोवृति एवं किसी कलाकार की व्यक्तिशः विशेषताओं के कारण पीढ़ी दर पीढ़ी शिष्यों के शिक्षा ग्रहण करने के फलस्वरूप संगीत के क्षेत्र मे "घराना" पद्धति की नींव पड़ी। यह परंपरा इतनी अनुशासित, सुदृढ़ और योजनाबद्ध थी कि जिसके कारण उस समय छपाई, रिकॉर्डिंग, आधुनिक संगीत यंत्र एवं अन्य साधन न होते हुए भी, संगीत की शिक्षा पीढ़ी दर पीढ़ी एक मौखिक परंपरा अपनी बारीकियों की विशेषताओं के साथ वर्तमान युग तक आ पहुंची है। अंग्रेजी शासन काल में रियासत का स्वरूप बदलने लगा। रियासतें पूर्ण रूप से स्वतंत्र ना होकर अंग्रेजों के अधीन शासन करने लगी ।इस समय संगीत को बहुत संघर्ष करना पड़ा, अंग्रेजों का ध्यान अपने राज्य विस्तार पर ही केन्द्रित रहा। उन्होंने संगीत को आध्यात्मिक के स्थान पर मनोरंजन का एक साधन मान लिया। इस समय संगीत शिक्षा गुरु की व्यक्तिगत इच्छा पर निर्भर हो गई तथा इस परंपरागत विधा में बहुत से दोष आ गए।

भारतीय संगीत में परिवर्तन के सतम्भ

19वीं शताब्दी के आरंभ में स्वर्गीय पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी, पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर एवं सौरेंद्र मोहन टैगोर जैसे अनेकों संगीत की महान विभूतियों ने संगीत के क्षेत्र में क्रांतिकारी कदम उठाए। इन्होंने संगीत की प्रायोगिक गायन शैलियों को सैद्धांतिक रूप प्रदान किया था। इन्होंने गुरुमुख से गायी जाने वाली विभिन्न गायन शैलियों के स्वरूप को लिपिबद्ध किया था। श्री भातखंडे जी ने राग रागिनी पद्धति को छोड़कर केवल "दस ठाठों" में रागों का वर्गीकरण किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने विभिन्न शिक्षण संस्थाओं का निर्माण एवं संचालन भी किया। श्री भातखंडे जी ने अथक प्रयास कर लखनऊ में 'मैरिस' कॉलेज एवं ग्वालियर में 'माधव म्यूजिक कॉलेज' की स्थापना की। पलुस्कर जी ने लाहौर में 'महा गंधर्व मंडल' के अंतर्गत एक संगीत विद्यालय की स्थापना की।

टैगोर जी ने 'बंगाल अकादमी ऑफ म्यूजिक' शिक्षण संस्थान की स्थापना एवं संगीत के क्षेत्र में 22 ग्रन्थों सहित 'यूनिवर्सल हिस्ट्री आफ म्यूजिक' ग्रंथकी रचना की। इन महान विभूतियों सहित अन्य अनेक संगीतज्ञों के प्रयास से संगीत के क्षेत्र में अनेक शिक्षण संस्थानों की स्थापना हुई। इन सभी का उद्देश्य प्राचीन घरानेदार संगीत की धरोहर को जन-जन के समक्ष लाकर संगीत शिक्षक को सुलभ करना एवं लोकप्रियता के शिखर तक पहुंचाना था।

उनके इस प्रयास का पहले तो विरोध हुआ, परंतु बाद में इनको संगीतज्ञों का सहयोग प्राप्त हुआ। शिक्षा प्रणाली के इस स्वरूप का प्रभाव यह हुआ कि ब्रिटिश शासन काल में संगीत की शिक्षा जो लगभग पतन के कगार पर पहुंच गई थी, को नई दिशा प्राप्त हुई। संगीत के क्षेत्र में नई नई शिक्षण संस्थाएं खुलने के कारण जन सामान्य को संगीत सीखने के अवसर प्राप्त हुए एवं संगीत की विभिन्न शैलियां तथा कलाकार समाज के सामने आने लगे। संगीत शिक्षण संस्थानों के बढ़ते चलन के कारण परंपरागत संगीत शिक्षा एवं घरानेदार संगीत शिक्षा पद्धति में संगीत शिक्षा के प्रति जो समर्पण भाव था, उसमें अब वह साधनता नहीं रही है। लगभग 40 - 50 वर्ष पूर्व संगीत शिक्षा कला की दृष्टि से ही सिखाई जाती थी। उस समय एक ही उद्देश्य था- संगीत कलाओं के लिए सीखना और शिष्यगण भी उसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु समर्पित भाव से सीखते थे। उस समय संस्थानों में गुरु और शिष्य इतनी तन्मयता के साथ संगीत शिक्षा का आदान-प्रदान करते थे कि उनके सामने एक ही लक्ष्य रहता था, संगीत कलाओं की सेवा करना। वर्तमान में संगीत शिक्षा की इस रूप में कलाओं की सेवा के स्थान पर डिग्री प्राप्त करना एवं आजीविका प्राप्त करने का एक माध्यम बना लिया है। वर्तमान में शैक्षणिक संस्थाओं का निर्माण एवं पाठ्यक्रम का निर्धारण कलाकार उत्पन्न करने के स्थान पर एक शिक्षक उत्पन्न करना ही प्रतीत होता है। जहां गुरु-शिष्य परंपरा अथवा घरानेदार शिक्षण

पद्धति में एक राग का अभ्यास कई वर्षों तक होता है, वहीं संस्थागत संगीत शिक्षा में एक वर्ष में ही कई राग सिखा दिए जाते हैं। इस कारण से विद्यार्थी ने तो संपूर्णतः सिखाए गए सभी रागों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर पाते हैं और ना ही भली प्रकार से उनका अभ्यास कर पाते हैं। संस्थागत शिक्षा पद्धति में अध्ययन समूह आधारित होने के कारण शिक्षक विद्यार्थियों पर व्यक्तिगत ध्यान नहीं दे पाते, जिससे विद्यार्थियों को संगीत के बारीकियों का ज्ञान नहीं हो पता। फलस्वरूप विद्यार्थी एक अच्छा श्रोता तो बन जाता है परंतु एक अच्छा कलाकार नहीं बन पाता।

वहीं घरानेदार शिक्षा पद्धति में शिष्य पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने के कारण उसको संगीत की बारीकियों का अच्छा ज्ञान प्राप्त होता है एवं वह उत्कृष्ट कोटि का कलाकार बन सकता है।

निष्कर्ष-

निष्कर्ष के तौर पर वर्तमान समय में संगीत शिक्षा के स्तर में वृद्धि हेतु घरानेदार शिक्षा पद्धति एवं संस्थागत शिक्षा पद्धति में समन्वय अत्यंत आवश्यक है। इस बाबत् कुछ उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

1. संस्थागत शिक्षा पद्धति में शिक्षा के सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक पाठ्यक्रम में कटौती कर सुनिर्धारित घराना शिक्षा पद्धति प्रशिक्षण आधारित पाठ्यक्रम विकसित करना चाहिए।
2. स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम में काम से कम दो माह तक किसी संगीत संस्था केंद्र में व्यावहारिक या प्रायोगिक प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए। इसके लिए इन संगीत संस्थाओं को कुछ मानधन भी प्रदान किया जाए।
3. स्नातकोत्तर स्तर के पाठ्यक्रम में व्यावहारिक प्रायोगिक प्रशिक्षण पर अधिक ध्यान देना की आवश्यकता है। इस पाठ्यक्रम में काम से कम 6 माह का व्यावहारिक प्रायोगिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। जिसके अंतर्गत विद्यार्थी को किन्हीं निश्चित घराने में गुरु के सानिध्य में रहकर कम से कम 6 से 8 घंटे प्रतिदिन व्यावहारिक प्रायोगिक प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए ।इस हेतु इन घरानों को एक निश्चित मानधन भी दिया जाए, जिससे इन घरानों को व्यावहारिक प्रायोगिक प्रशिक्षण प्रदान करने में कोई आपत्ति नहीं हो।
4. इन प्रशिक्षणों के साथ विद्यार्थियों को एक निश्चित अवधि के लिए अपने से कम स्तर की कक्षाओं के विद्यार्थियों को भी व्यावहारिक प्रायोगिक संगीत सीखने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।
5. समय-समय पर सभी विद्यार्थियों को मंच पर जाकर अपनी प्रस्तुति देने का अवसर प्राप्त भी होना चाहिए।
6. समय-समय पर संगीत की विभिन्न प्रकार के कार्यशालाएं विश्वविद्यालय स्तर शैक्षणिक या प्रशासनिक गतिविधियों संगोष्ठीयां एवं स्पीक मेके कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।

वास्तव में भारतीय संगीत शास्त्रीय संगीत एक साधन है। कालचक्र की गति एवं समय-समय पर विभिन्न कारणों से जो इसमें कुछ दोष उत्पन्न हुए हैं, उनको इन दोनों शिक्षण पद्धतियों के समन्वय से दूर किया जा सकता है। घरानेदार संगीत गुरुओं को अपने व्यवहार में लचीलापन लाते हुए एवं अपनी कला के प्रचार प्रसार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से संस्थागत संगीत शिक्षण संस्थानों के विद्यार्थियों को अपनी ज्ञान की ज्योति से प्रकाशमान करना चाहिए वही संस्थागत शिक्षण संस्थानों एवं विद्यार्थियों को उनको सर्वज्ञ मानते हुए उचित सम्मान प्रदान करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मेहता, आर. सी. (2008). भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं घराना परंपरा. नई दिल्ली: रीडवर्दी पब्लिकेशन।

2.देशपांडे, वी. एच. (1987). भारतीय संगीत परंपराएं: घरानों का सौंदर्यशास्त्रीय अध्ययन. मुंबई: पॉपुलर प्रकाशन।

3.धर, सुनीता. (1989). सेनिया घराना और भारतीय शास्त्रीय संगीत में उसका योगदान. नई दिल्ली: रिलायंस पब्लिशिंग हाउस।

4.भातखंडे, विष्णु नारायण. (2002). हिंदुस्तानी संगीत पद्धति. लखनऊ: संगीत कार्यालय।

5.देवधर, बी. आर. (1998). हिंदुस्तानी संगीत के स्तंभ. मुंबई: पॉपुलर प्रकाशन।

6.न्यूमन, डैनियल एम.(1980). उत्तर भारत में संगीत का जीवन.शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

7.वेड, बॉनी सी. (2004). भारत में संगीत: शास्त्रीय परंपराएं. नई दिल्ली: मनोहर प्रकाशन।

8.कैपवेल, चार्ल्स. (2005). भारतीय शास्त्रीय संगीत. लंदन: रूटलेज।

9.प्रज्ञानानंद, स्वामी. (1973). भारतीय संगीत का ऐतिहासिक विकास. कोलकाता: रामकृष्ण वेदांत मठ।

10.पाठक, संतोष.(2017). संगीत प्रवाह चिरंतर. निवाई (टोंक - राज.): नवजीवन पब्लिकेशन

📄 शोध पत्र

11.बनर्जी, ए., सन्याल, एस., सेनगुप्ता, आर., एवं घोष, डी. (2016).
हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के घरानों में गायन शैली का विविधता अध्ययन. जर्नल ऑफ म्यूजिकोलॉजी।

12.न्यूमन, डैनियल एम. (1991).
उत्तर भारत में संगीत शिक्षा: गुरु-शिष्य परंपरा और संस्थागत स्वरूप. एथ्नोम्यूजिकोलॉजी जर्नल।

13.अलेख, एस. (2017).
हिंदुस्तानी संगीत में राग पहचान की आधुनिक तकनीक. अंतरराष्ट्रीय संगीत अनुसंधान पत्रिका।

14.शिकारपुर, एन. आदि. (2024).
हिंदुस्तानी संगीत में स्वर संरचना का विश्लेषणात्मक अध्ययन. संगीत विज्ञान जर्नल।

📘 संदर्भ स्रोत

15.घराना परंपरा (हिंदुस्तानी संगीत). विश्वकोशीय संदर्भ स्रोत।

16.गवई, पुट्टराज. भारतीय संगीत शिक्षा और घराना प्रणाली पर विभिन्न अध्ययन।